हिन्दी–अनुशीलन

(पीयर रिव्यूड व यूजीसी केयर से अनुमोदित जर्नल)

वर्ष 61 जनवरी–जून 2019 अंक 1–2 ISSN : 2249-930X

परामर्शदाता

प्रो. कमल किशोर गोयनका
प्रो. सुरेन्द्र दुबे
प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित

प्रधान संपादक

प्रो. नंदकिशोर पाण्डेय

संपादक

डॉ. नरेन्द्र मिश्र

संपादन सहयोग

डॉ0 निर्मला अग्रवाल
प्रो0 मीरा दीक्षित

भारतीय हिन्दी परिषद् प्रयाग

हिन्दी अनुशीलन

(पीयर रिव्यूड व यूजीसी केयर से अनुमोदित जर्नल)

ISSN : 2249-930X

प्रकाशक : डॉ0 निर्मला अग्रवाल, प्रबंधमंत्री, भारतीय हिन्दी परिषद्
हिन्दी–विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
Website- www.bhartiyahindiparishad.com
Email- hindianushcelan@gmail.com

मूल्य : रु0 50.00

अक्षर संयोजन : जितेन्द्र कुमार मिश्र, मो0– 09452365928
मुद्रक : नागरी प्रेस, अलोपीबाग, इलाहाबाद

अनुक्रमणिका

1. विमर्श — 5
प्रो0 नंदकिशोर पाण्डेय

2. संवाद — 16
प्रो0 नरेन्द्र मिश्र

3. भारतीय काव्यशास्त्र और कालजयी कृति की अवधारणा — 23
प्रो0 जयप्रकाश

4. हिन्दी की प्रथम कालजयी कृति चंद्रकान्ता — 32
डॉ0 मीता सोलंकी

5. कालजयी रचना : सूरसागर — 42
डॉ0 श्यामसुंदर पाण्डेय

6. रामचरितमानस में सामाजिक सद्भाव — 48
डॉ0 रवीन्द्र कुमार उपाध्याय

7. नाभादास कृत भक्तमाल एक कालजयी कृति — 58
डॉ0 प्रेम सिंह

8. विहारी सतसई का मूल्यांकन — 67
डॉ0 महात्मा पाण्डेय

9. प्रिय प्रवास का महाकाव्यत्व — 75
डॉ0 राजेन्द्र कुमार सिंघवी

10. भारत भारती एक कालजयी कृति — 79
डॉ0 सुनील कुलकर्णी

11. राम की कथा और उर्मिला की व्यथा का गान : साकेत — 86
डॉ0 नवीन नंदवाना

12. महाकाव्य कामायनी : एक कालजयी रचना — 98
डॉ0 राजेन्द्र कृष्ण पारिक

13. बाणभट्ट की आत्मकथा : आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी — 106
डॉ0 सरला पण्ड्या

14. उपन्यास सम्राट की कालजयी कृति 'गोदान' — 110
डॉ0 विवेक शंकर

15. भारतीय नारीत्व के गौरव के चितेरे : वृंदावनलाल वर्मा — 116
डॉ0 महीपाल सिंह

16. कालजयी कहानी कफन — 121
डॉ0 सूर्यकांत त्रिपाठी

17. लोकजीवन के रंग में रँगा मैला आँचल — 127
डॉ0 कमला चौधरी

18. रागदरबारी के विडंबनाग्रस्त समाज की व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति — 133
प्रो0 शैलेन्द्र शर्मा

19. मानस के हंस के तुलसी — 144
डॉ0 अमित कुमार भारती

20. हिन्दी काव्य की ऐतिहासिक ऊर्जा एवं रसदीप्ति — 151
डॉ0 निर्मला अग्रवाल

21. कालजयी कृति : गांधी पंचशती — 158
डॉ0 कृष्णगोपाल मिश्र

राम की कथा और उर्मिला की व्यथा का गान : 'साकेत'

डॉ. नवीन नन्दवाना

हिंदी कविता के अप्रतिम हस्ताक्षर मैथिलीशरण गुप्त जिन्होंने न केवल साहित्य को बल्कि समाज को भी अपनी रचनाओं के माध्यम से दिशा बोध देने का अविस्मरणीय कार्य किया। ऐसे महान रचनाकार को हिंदी जगत राष्ट्रकवि के नाम से जानता है। हिंदी के अमर कवि और द्विवेदी युग के अप्रतिम हस्ताक्षर मैथिलीशरण गुप्त ने भारत की संस्कृति और स्वदेशानुराग को अपनी कविता का विषय बनाया। राष्ट्रधर्म के अपने कर्तव्य का पालन उन्होंने उस निष्ठा से किया कि युगों बाद आज भी हिंदी जगत उनका पावन स्मरण करता है।

उनकी पहली काव्य रचना 'रंग में भंग' 1909 ई में प्रकाशित हुई। इसके ठीक बाद ही 1910 में उन्होंने 'जयद्रथ वध' की रचना की। गुप्त जी की ख्याति का आधार ग्रंथ 'भारत भारती' (1912) है जो कि अंग्रेजों की गुलामी के दौर में भारतवासियों में आजादी के भाव जगाने में सहायक हुई। यह ग्रंथ वास्तव में सोते हुए भारतीयों के लिए जागरण गान सिद्ध हुआ। इस ग्रंथ ने देश के प्रत्येक वर्ग के लोगों में उत्साह का सचार किया। समाज के एक–एक वर्ग को उद्‌बोधन शैली में दिशाबोध देने वाला यह ग्रंथ जन–जन में लोकप्रिय हुआ। साथ ही इससे गुप्त जी ने भी बहुत लोकप्रियता प्राप्त की।

गुप्त जी का रचना संसार वैभवपूर्ण हैं। उन्होंने हिंदी जगत को 02 महाकाव्यों सहित 19 खंडकाव्य और अन्य ग्रंथ भेंट किए। 'रंग में भंग', 'जयद्रथ वध', 'भारत भारती', 'किसान', 'पंचवटी', 'हिंदू', 'झंकार', 'साकेत', 'यशोधरा', 'जयभारत' और 'विष्णुप्रिया' उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। गुप्त जी के रचनाकाल में हिंदी काव्यधारा ने कई मोड देखे किंतु गुप्त जी अपने गुरु के बताए मार्ग पर आजीवन अटल रहे। वादों व विचारों की फैशन का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। स्वदेशानुराग में निमग्न रहने वाले गुप्त जी सदैव भारतीय संस्कृति के गौरव के गुणगान के साथ–साथ स्त्री, कृषक और वंचित के हक में सदैव खड़े रहे।

'साकेत' (1931 ई.) की रचना की गुप्त जी के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव है। 'साकेत' रचना की प्रेरणा गुप्त जी को अपने काव्य गुरु महावीरप्रसाद द्विवेदी से ही मिली थी। उन्होंने अपने काव्यगुरु के पावन योगदान का स्मरण 'साकेत' की भूमिका में यह कहते हुए स्वीकार कि–

"करते तुलसी भी कैसे मानस नाद।
महावीर का यदि उन्हें मिलता नहीं प्रसाद।।'

'साकेत' को रामचरित मानस के बाद का रामकाव्यधारा का एक महत्त्वपूर्ण महाकाव्य कहा जा सकता है। इस ग्रंथ से पूर्व रचित रामकाव्य ग्रंथों में राम, सीता और लक्ष्मण के चरित्र प्रमुखता से वर्णित हैं। साहित्य जगत् में प्रथम बार उर्मिला के चरित्र को आधार बनाकर काव्य रचना हुई, यही इस ग्रंथ का वैशिष्ट्य है। इस ग्रंथ के माध्यम से गुप्त जी ने उर्मिला के त्याग व समर्पण भाव को रेखांकित किया है।

गुप्त जी की रामभक्ति पर विचार करते हुए डॉ. नगेंद्र द्वारा संपादित 'हिंदी साहित्य का इतिहास' नामक ग्रंथ में वर्णित है कि– "मैथिलीशरण गुप्त प्रसिद्ध रामभक्त कवि थे। इसके साथ ही इन्होंने भारतीय जीवन को समग्रता में समझने और प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। 'मानस' के पश्चात् हिंदी में रामकाव्य का दूसरा स्तंभ मैथिलीशरण गुप्त–कृत 'साकेत' ही है। वास्तव में आधुनिक युग में प्रबंधकाव्यों की विलोपमान परंपरा के संरक्षक गुप्त जी ही हैं।"[2]

बुद्ध और यशोधरा के प्रसंगों को आधार बनाकर उन्होंने 'यशोधरा' नामक ग्रंथ की रचना की। इस ग्रंथ के माध्यम से 'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।' कहकर नारी के हक में आवाज उठाते हुए उन्होंने उसके दर्द को अभिव्यक्ति दी। यशोधरा का त्याग जो अब तक साहित्य में उचित स्थान प्राप्त नहीं कर सका था, उसे गुप्त जी ने अपनी इस रचना के माध्यम से रेखांकित कर इस पात्र की ओर भी रचनाकारों का ध्यान आकृष्ट किया।

साहित्य जगत् में उपेक्षित इसी तरह के एक और पात्र विष्णुप्रिया पर भी गुप्त जी का ध्यान गया। और उन्होंने चैतन्य महाप्रभु की पत्नी विष्णुप्रिया के जीवन व समर्पण को आधार बनाकर 'विष्णुप्रिया' नामक ग्रंथ की रचना की। जिसके मुखपृष्ठ पर ही हम ये पंक्तियाँ देख सकते हैं– 'मेरे भगवान सबके हों मैं उन्हीं की हूँ। मेरे भाग्य मुझमें मुँदे तो खुले सबमें।।' इस प्रकार अपने तीन विशिष्ट ग्रंथों 'साकेत', 'यशोधरा' और 'विष्णुप्रिया' के माध्यम से गुप्त जी ने स्त्री के हक में उसी दौर में आवाज उठा दी थी, जब स्त्री–विमर्श जैसा कोई विषय साहित्य में नहीं आया था। इसी तरह 'जयभारत' भी एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ हैं जिसके सैंतालीस प्रकरणों के माध्यम से गुप्त जी ने महाभारत की कथा को विशिष्टता से अभिव्यक्ति दी है। गुप्त जी का नवजागरण और जनजागरण का काव्य है। भारत और यहाँ की समृद्ध संस्कृति पूरी तन्मयता के साथ वर्णित हैं।

'साकेत' गुप्त जी की प्रौढ़तम रचना है। इसका मुख्य उद्‌देश्य भले ही कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता के भाव को दूर कर उर्मिला के चरित्र के वैशिष्ट्य को दर्शाना रहा हो किंतु रामकथा इसके केंद्र में रही है। 'साकेत' की रचना की प्रेरणा गुप्त जी को रवीन्द्रनाथ टैगोर और महावीर प्रसाद द्विवेदी के लेख से मिली। टैगोर ने बांग्ला में 'काव्य की उपेक्षिताएँ' लेख लिखकर तत्कालीन रचनाकारों का ध्यान इस बात की ओर खींचा कि साहित्य जगत में अभी भी ऐसे कई पात्र हैं जिनकी ओर रचनाकारों का ध्यान अभी तक नहीं गया है। टैगोर के इस लेख से प्रभावित होकर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका (1908) में एक लेख लिखा जिसका शीर्षक था– 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता'। इसी लेख से प्रेरणा

ग्रहण कर मैथिलीशरण गुप्त ने उर्मिला के चरित्र को आधार बनाकर ग्रंथ रचना का निश्चय किया। "सबसे प्रधान बात तो यह है कि 'साकेत' में आकर राम और सीता की कहानी प्रधानतः उर्मिला की कहानी बन जाती है और उसी रूप में उसका और संगठन आज तक (राम की राम कथा की पृष्ठभूमि पर) होता है।"[3] 'साकेत' रचना के पीछे गुप्त जी की भक्ति–भावना प्रमुख रही है। राम का चरित्र वैशिष्ट्य का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं कि–

"राम तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि बन जाए सहज संभाव्य है।"[4]

वैष्णव भक्ति या यों कहें कि रामभक्ति का जो संस्कार उन्हें अपने परिवार से बचपन से ही मिला था, उसकी चरम परिणति 'साकेत' है। इस ग्रंथ के माध्यम से गुप्त जी ने न केवल उर्मिला के चरित्र के विविध पक्षों का उद्घाटन कर उसे कथा का केंद्र बनाया बल्कि साथ ही साथ कैकेयी के चरित्र को भी नई दृष्टि से व्याख्यायित किया है। 'साकेत' रचना की प्रेरणा के पीछे प्रमुख आधार तो महावीरप्रसाद द्विवेदी और प्रकारांतर से टैगोर के लेख रहे किंतु साथ ही गुप्त जी के हृदय–सागर में उत्ताल तरंगों के रूप में लहर रही रामभक्ति भी प्रमुख रही है।

वे जानते थे कि रामकथा को आधार बनाकर खड़ीबोली हिंदी में अभी तक कोई महाकाव्य नहीं रचा गया था। अतः गुप्त जी साहित्य जगत की इस कमी की भी पूर्ति करना चाहते थे। छोटेलाल, कृष्णदास, मुंशी अजमेरी और सियारामशरण गुप्त आदि की प्रेरणा ने भी इस दिशा में बढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया। 'साकेत' गुप्त जी के कई वर्षों की श्रमसाध्य–साधना का परिणाम है। 'साकेत' की रचना का आरंभ गुप्त जी ने सन 1916 में किया था जो 1931 तक आकर पूर्ण हुआ। इन वर्षों में गुप्त जी के हृदय में रामकथा कई रूपों में तरंगायित होती रही। साथ ही कवि के पारिवारिक, सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन के उतार–चढ़ावों ने भी इस रचना को मजबूती देने में योग ही दिया होगा। इन्हीं सब के मंथन से 'साकेत' रूपी नवनीत हिंदी जगत् को मिल पाया।

'साकेत' के नामकरण पर यदि हम विचार करें तो पाते हैं कि महाकाव्यों के नामकरण को लेकर विविध आचार्यों और विद्वानों ने कुछ आधार बताए हैं। 'साहित्यदर्पण' में उल्लेख है कि–

"कवेवृत्तस्य वा नाम्ना नायकस्येतरस्य वा।
नामास्य सर्गोपादेय कथया सर्ग नाम तु।।"[5]

अर्थात् महाकाव्यों का नामकरण कवि, कथावस्तु, नायक अथवा किसी अन्य पात्र के नाम पर किया जा सकता है। सर्ग का नामकरण उसके वर्ण्य–विषय के आधार पर किया जाना चाहिए।

द्विवेदी जी की प्रेरणा से 'साकेत' के लिए कलम उठाने वाले कवि ने उर्मिला को ही आधार बनाकर प्रारंभ में 'उर्मिला' और 'उर्मिला उत्ताप' जैसे शीर्षक इस रचना को दिए किंतु ये दोनों नाम उनके हृदय में इतनी जगह न बना सके कारण कि उस समय दो बातें गुप्त जी के ध्यान में रही होगी। अपने आराध्य राम का गुणगान और उर्मिला के चरित्र का उद्घाटन। उर्मिला विषयक नामकरण करके एक उद्देश्य तो

पूरा हो जाता किंतु रामकथा के उद्घाटन वाला पक्ष यह नाम नहीं समेट पा रहा था। अतः द्विवेदी जी के सुझाव से इस रचना का नामकरण उर्मिला केंद्रित किसी नाम पर न कर 'साकेत' कर दिया गया जिससे कि रामकथा का भी समाविष्ट हो गया और उर्मिला का केंद्रीय पात्र बनकर उपस्थित होना भी। गुप्त जी ने कथा संयोजन ही इस प्रकार किया है कि संपूर्ण काव्य का केंद्र बिंदु 'साकेत' ही बनकर रह जाता है। संपूर्ण घटनाक्रमों को साकेत से ही संचालित दिखाया गया है। यहाँ एक प्रसंग में चित्रकूट जाने का वर्णन अवश्य मिलता है किंतु वहाँ भी कवि ने यह तर्क दिया है कि–

"चल चपल कलम, निज चित्रकूट चल देखें,
प्रभु–चरण–चिह्न पर सकल भाल–लिपि लेखें।
सम्प्रति साकेत–समाज वहीं है सारा,
सर्वत्र हमारे संग स्वदेश हमारा।"[6]

इस प्रकार से गुप्त जी चित्रकूट के प्रसंग का भी अच्छा समाधान प्रस्तुत कर देते हैं। डॉ. नगेंद्र का भी मत है कि– "संपूर्ण कथा की रंगभूमि साकेत ही रहती है कवि वहीं उर्मिला की सेवा में आसीन रहता है– और समस्त घटनाओं का समाहार साकेत में ही हो जाता है अतः स्थान–ऐक्य का साकेत की कथावस्तु में बड़ा सफल प्रयोग है और साथ ही साकेत नाम भी पूर्ण रूप से सार्थक होता है।"

वैसे भी उर्मिला के विरह का वर्णन कैकेयी के चरित्र के नवीन पक्षों का उद्घाटन और लक्ष्मण के शक्ति बाण लगने पर अयोध्यावासियों की प्रतिक्रिया आदि जानने के प्रसंग भी साकेत (अयोध्या) केंद्रित ही है। अतः ग्रंथ का नामकरण भी उचित ही प्रतीत होता है।

'साकेत' की कथा बारह सर्गों में निबद्ध है। हम प्रत्येक सर्ग की कथावस्तु और विषय संयोजन को आधार बनाते हैं तो पाते हैं कि इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग में गुप्त जी ने रामावतरण के साथ ही साकेत नगरी की समृद्धि और वैभव को दर्शाया है। सुखी दाम्पत्य जीवन के विविध हास–परिहासों का चित्रण करते हुए गुप्त जी ने राम राज्याभिषेक की तैयारी और किसी भावी अनिष्ट की ओर भी इसी सर्ग में संकेत किया है। इसी सर्ग में साकेत नगरी की तुलना स्वर्ग से करते हुए वे लिखते हैं कि–

"स्वर्ग की तुलना उचित ही है यहाँ,
किंतु सुरसरिता कहाँ, सरयू कहाँ ?
वह मरों को मात्र पार उतारती,
यह यहीं से जीवितों को तारती !"[7]

महाकाव्य के दूसरे सर्ग में मंथरा और कैकेयी का संवाद दर्शाया गया है। जहाँ मंथरा, कैकेयी को अपने पुत्र भरत के राज्याभिषेक और राम के वनवास के वचन माँगने के लिए प्रोत्साहित करती हैं। बातों में आ चुकी कैकेयी कोप भवन में चली जाती हैं और राजा दशरथ से दोनों वर माँगती हैं। यह सुन राजा मूर्च्छित हो जाते हैं। इसी की कथा का वर्णन करते हुए गुप्त जी यहाँ लिखते हैं कि–

"गई दासी, पर उसकी बात,
दे गई मानो कुछ आघात–

भरत–से सुत पर भी संदेह,
बुलाया तक न उन्हें जो गेह !"[9]

तीसरे सर्ग में राम और लक्ष्मण के आगमन, विभिन्न स्थितियों के परिचय, वनवास की बात पर लक्ष्मण का क्रोध और दशरथ की मूर्च्छा के प्रसंग वर्णित हैं। चौथे सर्ग में कौशल्या की मूर्च्छा, राम द्वारा उन्हें समझाना, सुमित्रा के वीर भाव और राम–लक्ष्मण–सीता द्वारा विदाई माँगना भी दर्शाया गया है।

"प्रस्थान, – वन की ओर,
या लोक–मन की ओर ?
होकर न धन की ओर,
है राम जन की ओर।।"[10]

'साकेत' का पाँचवा सर्ग राम वनगमन की घटना को दर्शाता है। राम, सीता, लक्ष्मण और सुमंत के साथ वन के लिए प्रस्थान करते हैं। यहाँ अयोध्यावासियों के करुणापूर्ण भावों का सुंदर चित्रण गुप्त जी ने किया है। वन और प्रकृति के सुंदर दृश्यों का वर्णन भी हम यहाँ देख सकते हैं। अयोध्या के प्रति स्नेह के भाव इस प्रकार अभिव्यक्त हुए हैं–

"राज्य जाय, आप चला जाऊं कहीं,
आऊँ अथवा लौट यहाँ आऊँ नहीं,
रामचंद्र भवभूमि अयोध्या का सदा,
और अयोध्या राम चंद्र की सर्वदा।।"[11]

छठा सर्ग उर्मिला और माताओं के कारुणिक चित्रों को रेखांकित करने के साथ–साथ सुमंत के लौटने और दशरथ की मृत्यु के घटनाक्रम को वाणी प्रदान करता है। सातवें सर्ग की कथा भरत के प्रसंग से जुड़ी है। यहाँ राजा दशरथ के स्वर्गारथ होने के साथ–साथ कैकेयी द्वारा किए गए विविध घटनाक्रमों और भरत द्वारा पिता दशरथ की अंत्येष्टि का वर्णन है। आठवाँ सर्ग चित्रकूट की गाथाओं को संजोये हैं। राम, लक्ष्मण और जानकी के चित्रकूट में निवास के वर्णन के साथ–साथ इस सर्ग की महत्ता इस बात में है कि चित्रकूट में हुई राजसभा का अपना सामाजिक–सांस्कृतिक महत्त्व है। भरत का आदर्श चरित्र सबके सम्मुख उपस्थित होता है। वहीं की कैकेयी के चरित्र के नए पक्षों से हम परिचित होते हैं। कैकेयी का पश्चाताप और अपनी गलती या भूल को स्वीकार कर लेना और राम से वापस लौटने का उसका आग्रह कैकेयी की एक नई छवि को प्रस्तुत करता है। वह अपनी भूल स्वीकार करती हुई कहती है कि–

"थूके, मुझ पर त्रैलोक्य भले ही थूके,
जो कोई, जो कह सके, कहे, क्यों चूके ?
छीने न मातृपद किंतु भरत का मुझसे,
रे राम, दुहाई करूँ और क्या तुझसे ?"[12]

साथ ही वह कहती है कि –

"युग युग तक चलती रहे कठोर कहानी–
'रघुकुल में भी थी एक अभागिन रानी।'

निज जन्म जन्म में सुने जीव यह मेरा–
'धिक्कार ! उसे था महा स्वार्थ ने घेरा।'"[13]

नवाँ सर्ग 'साकेत' का प्राण कहा जा सकता है। अपने गुरु महावीरप्रसाद द्विवेदी से जो प्रेरणा इस ग्रंथ के निमित्त मैथिलीशरण गुप्त को मिली थी, उसके पीछे उर्मिला की कथा का गान प्रमुख था। इस सर्ग में गुप्त जी ने उर्मिला के चरित्र और उसके विरह का गान किया है। उर्मिला के माध्यम से गुप्त जी ने लिखा है कि–

"वेदने, तू भी भली बनी !
पाई मैंने आज तुझी में अपनी चाह घनी।"[14]

दसवें सर्ग में हम स्मृति संचारी के माध्यम से हुए वर्णन को देख सकते हैं। यहाँ उर्मिला अयोध्या के प्रतापी वंश का गुणगान करने के साथ–साथ जनक परिवार, सीता–स्वयंवर, वाटिका–प्रसंग आदि का वर्णन स्मृति संचारी के रूप में कर रही है। ग्यारहवाँ सर्ग भरत और मांडवी के जीवन के चरित्र को दर्शाता है। साथ ही आकाश मार्ग से संजीवनी लेकर जाते हुए हनुमान के मुख से मारीच के वध, सीता–हरण, सुग्रीव–मिलन, लंका–दहन, लक्ष्मण को शक्ति बाण लगने आदि के प्रसंगों को सुनाया गया है। 'साकेत' का आखिरी बारहवाँ सर्ग इन सब घटनाओं को सुनने के बाद अयोध्यावासियों की स्मृतियों और मनःस्थितियों को दर्शाता है। उर्मिला के वीर भाव, भरत का रावण से युद्ध करने के लिए सेना सजाना, गुरु वशिष्ठ द्वारा दिव्य दृष्टि से लंका की घटनाओं को बताना, राम का सीता, लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण सहित अयोध्या आगमन, राम–भरत मिलन, लक्ष्मण–उर्मिला मिलन आदि की कथा दर्शाता है। इस प्रकार 'साकेत' को केंद्र मानकर गुप्त जी ने उर्मिला के विरह वर्णन, उसके चरित्र के विविध पक्षों के उद्घाटन के साथ–साथ रामकथा का गुणगान किया है। प्रो. अरुण होता ने 'आधुनिक हिंदी कविता : युगीन संदर्भ पर विचार करते हुए लिखा है कि– "गुप्त जी की नारी–दृष्टि में पुनरुत्थानवादी विचार का प्रभाव लक्षित होता है परंतु वह पुनरुत्थानवादी विचार तक सीमित नहीं है। गुप्तजी की नारी अनुराग एवं त्याग से परिपूर्ण है, कर्तव्यबोध से पूर्ण है। जड़–चेतन के प्रति समान रूप से उसकी संवेदना व्याप्त है। परंतु वह अपने अधिकारों के प्रति भी जागरूक है। वह अपने अधिकारों के लिए लड़ भी सकती है – 'स्वत्वों की भिक्षा कैसी ?' (साकेत) गुप्तजी ने पत्नी को अर्धांगिनी एवं संगिनी के रूप में भी चित्रित किया है, अर्धांगिनी रूप में अधिकार एवं कर्तव्य का समान रूप रहता है। इसलिए यशोधरा पति की सिद्धियों का कुछ अंश दावा करती है– 'उसमें मेरा भी कुछ होगा।' सीता स्वयं को राम की अर्धांगिनी कहकर अपना अधिकार जाहिर करती है राम को साथ ले चलने को बाध्य करती है। राम विवश हो जाते हैं इस तर्क के सामने कि माता–पिता के आदेश का पूर्ण पालन अर्धांगिनी के बिना अधूरा है।"[15]

'साकेत' में गुप्त जी कलम ने उर्मिला का (जो कि साकेत का केंद्रीय पात्र है।) बड़ा ही प्रभावी चित्रण किया है। उस परम सुंदरी का चित्रण करते हुए गुप्त जी उसकी तुलना कनकलता से करते हुए उसे स्वर्ग का सुमन और कमल के समान उसे कोमल दर्शाते हैं कि वह इस संसार के शिल्पी की श्रेष्ठ कल्पना है–

"यह सजीव सुवर्ण की प्रतिमा नई,
आप विधि के हाथ ढाली गई।

168

कनक–लतिका भी कमल–सी कोमला,
धन्य है उस कल्प–शिल्पी की कला !"[16]

शील और श्रेष्ठ स्वभाव की धनी उस उर्मिला के विषय में कवि का मानना है कि वह कालिदास की नायिका शकुंतला की भाँति परम सुंदर है, स्वयं विधाता ने उसे अपने हाथों से सँवारा है। विनोदी स्वभाव की वह उर्मिला संयोग व सुख के दिनों में हास–परिहास करती भी दिखाई पड़ती है। चित्रकला में निपुण उर्मिला एक उच्च कोटि की कलाकार भी है।

उर्मिला का चित्रण गुप्त जी ने एक आदर्श पत्नी के रूप में भी किया है। वह अपने पति और परिवार के लिए समर्पण का भाव भी रखती है। वह स्वयं भी सीता की भाँति वन जाने का मार्ग चुनती है परंतु लक्ष्मण की आज्ञा शिरोधार्य करने में भी पीछे नहीं रहती। वह अपने पति की आज्ञा मान उनके द्वारा दिए गए विकल्प को चुनती है और भावों से भरे अपने हृदय को समझाती है कि –

"हे मन !
तू प्रिय–पथ का विघ्न न बन।
आज स्वार्थ है त्याग भरा !
हो अनुराग विराग भरा !
तू विकार से पूर्ण न हो,
शोक–भार से चूर्ण न हो।"[17]

उर्मिला के इसी त्याग, बलिदान, धैर्य और समझ को ध्यान में रख सीता स्वयं उसे 'महाव्रता' शब्द से विभूषित करती है। लक्ष्मण के वनगमन की वेला में उसके हृदय में भावनाओं का ज्वार उमड़ता है और वह उस पीड़ा को सहन नहीं कर पाती है। वन गमन के समय सन्न्यासियों की वेशभूषा में जब वह अपने पति को देखती है तो अपने को संभाल नहीं पाती है और धड़ाम से धरती पर गिर पड़ती है। फिर भी विरह की इस वेला को वह बड़ी वेदनापूर्ण स्थितियों में व्यतीत करती है। हम 'साकेत' की इन पंक्तियों से उर्मिला की भाव–दशा को समझ सकते हैं–

"मानस मंदिर में सती, पति की प्रतिमा थाप,
जलती–सी उस विरह में, बनी आरती आप !
आँखों में प्रिय मूर्ति थी, भूले थे सब भोग,
हुआ योग से भी अधिक, उसका विषम–वियोग !
आठ पहर चौंसठ घड़ी, स्वामी का ही ध्यान,
छूट गया पीछे स्वयं, उससे आत्मज्ञान !"[18]

विरह–व्याकुला वह उर्मिला कभी तो प्रेम और विरह के ज्वार के कारण कहती है कि 'मैं अबला बाल वियोगिनी कुछ तो दया करो' और कभी उसे अपने इस विरह काल पर गर्व होने लगता है और वह अपनी चरण–धूलि रति के सर पर चढ़ाने की बात भी करने लगती है। कर्तव्य पथ को स्वीकार करने वाली वह उर्मिला विरह के अथाह सागर में गोते लगाते हुए समस्त कष्ट, पीड़ा, दर्द आदि सहते हुए भी अपने को दृढ रखती है। तभी तो 'साकेत' के आठवें सर्ग में जब वह चित्रकूट में माताओं को ढाढ़स बँधाते हुए कहती है कि–

"जीती है अब भी अम्ब, उर्मिला बेटी ;
इन चरणों की चिरकाल रहूँ मैं तेरी चेटी।"[19]

उर्मिला का चरित्र कई विशेषताओं से भरा है। 'सबको सुख होगा तो मेरी भी आएगी बारी' में विश्वास रखने वाली वह उर्मिला एक तपस्विनी की भाँति अपना जीवन जीती है। भोगों का त्याग कर वह एक संवेदनशील और परदुःखकातर तपस्विनी की भाँति जीवन बिताती है। तभी तो वह कहती है कि–

"दीपक–संग शलभ भी जला न सखि, जीत सत्व से तम को
क्या देखना–दिखाना क्या करना है, प्रकाश का हमको।।"[20]

विरह के करुणार्द्र दिनों में भी वह अपने पथ से भटकती नहीं। अपने कर्तव्य को न केवल घर–परिवार बल्कि समाज और राष्ट्र तक स्वीकार करती हुई स्वदेश प्रेम के भावों को अभिव्यक्ति देती है। वह सेवा और विश्व–बंधुत्व के भावों को अभिव्यक्त करती हुई घायल सैनिकों के घावों पर मरहम पट्टी करने को तत्पर दिखाई पड़ती है। वह केवल विरह के सागर में ही डूबी नहीं रहती वरन् अपने कर्तव्य–पथ का भी उसे भान है तभी तो वह कहती हैं कि–

"वीरो, पर, यह योग भला खोऊँगी मैं,
अपने हाथों घाव तुम्हारे धोऊँगी मैं।
पानी दूँगी तुम्हें, न पलभर सोऊँगी मैं,
गा अपनों की विजय, परों पर रोऊँगी मैं।।"[21]

विरह–पीड़िता उर्मिला लक्ष्मण के वियोग में दुबली–पतली हो जाती है। चित्रकूट में जब लक्ष्मण का उर्मिला से मिलना होता है तब वे उसे देख सोचते हैं कि–

"यह काया है या शेष उसी की छाया,
क्षण भर उनकी कुछ नहीं समझ में आया!"[22]

ऐसी अवस्था में उर्मिला अपने मन से कमजोर नहीं है। लक्ष्मण को अपने कर्तव्य से डिगाने का उसका कोई आग्रह नहीं है। तभी तो जिस समय लक्ष्मण उससे बात करने में सकुचा रहे होते हैं या कुछ दुविधा में पड़े होते हैं, उसी क्षण वह अपने हृदय को दृढ़कर बोल पड़ती है कि–

"मेरे उपवन के हरिण, आज वनचारी,
मैं बाँध न लूँगी तुम्हें, तजो भय भारी।"[23]

'साकेत : एक अध्ययन' में इस विषय पर विचार करते हुए डॉ. नगेंद्र लिखते हैं कि– "उर्मिला के विरह वर्णन में भी कवि के व्यक्तित्व और उसकी शैली की भाँति प्राचीन एवं नवीन का सम्मिश्रण है। एक ओर उसमें ताप का ऊहात्मक वर्णन है, षड्ऋतु का समावेश है, तो दूसरी ओर व्यथा का संवेदनात्मक एवं मनोवैज्ञानिक व्यक्तीकरण भी।"[24]

विरह की दशा उर्मिला को बड़ी कष्टप्रद लगती है। उसे ऐसे में समय बिताना बड़ा भारी लगने लगता है। इसी कारण वह घर के कामों में संलग्न होकर अपने उस विरह की पीड़ा को कुछ भुलाना चाहती है। डॉ. नगेंद्र का मानना है कि– "वास्तव में

उर्मिला का विरह– जीवन से बाहर की वस्तु नहीं है, उसका प्रतिफलन नित्य–प्रति के गृहस्थ–जीवन में ही हुआ है। वह न तो कुलकानी बेचकर योगिनी ही बनकर घर से निकलती है, न उसका उन्माद ही साधारण जीवन से परे कोई प्रलयंकर विधान है। वह तो राज–परिवार की भी वियोगिनी कुल–ललना है। उसका जीवन एक कारागार बन गया है, जिसमें बंदिनी स्मृतियाँ छटपटा रही हैं– साथ ही नित्य–प्रति के कर्तव्य–कर्म भी सजग प्रहरियों की भाँति अड़े रहते हैं। उसको खाना है, पीना है, स्नान–संध्या करना है, पालित पशु–पक्षियों की चिंता करनी है, दूसरों की सेवा–सुश्रुषा का भार है– परंतु उधर उसके सम्मुख अवधि के चौदह वर्ष हैं– जिनका एक–एक पल, एक–एक वर्ष से अधिक है– ऐसे सुदीर्घ चौदह वर्ष ! विरहिणी का जीवन समय की शृंखला में जकड़ा हुआ है– प्रातःकाल होता है, बड़ी कठिनाई से मध्याह्न आता है, फिर संध्या ;और रातों तो कल्प हो जाती है। समय काटने का कोई साधन नहीं ; हो तो उसका उपभोग करने की क्षमता नहीं ! बस दिन भर में उसे खाना, पीना, सोना और रोना है।"[25]

इसी कारण उर्मिला रसोई के कामों में स्वयं को व्यस्त करती है किंतु वहाँ भी उसे वह पीड़ा आ घेरती है। वह कहती है कि–

"बनाती रसोई, सभी को खिलाती,
इसी काम में आज मैं तृप्ति पाती।
रहा किंतु मेरे लिए एक रोना,
खिलाऊँ किसे मैं अलौना–सलौना।।"[26]

विरह की उस पीड़ा को सहते हुए वह उर्मिला अपने भवन के पक्षियों से भी पूछ बैठती है कि 'कह विहग कहाँ है आज आचार्य तेरे' और जब उसे यह जवाब मिलता है कि वह मृगया मे गए हैं तो वह लक्ष्मण के लिए कहती है कि 'सचमुच मृगया मैं तो अहेरी नए वे' वह अपनी विरह पीडा को अपने समान अन्य विरहिणी स्त्रियों से बातचीत कर कम करना चाहती हैं। तभी तो वह कहती हैं कि–

"प्रोषितपतिकाएँ हों जितनी भी सखि,
उन्हें निमंत्रण दे आ।
समदुःखिनी मिलें तो दुःख बँटे,
जा, प्रणयपुरस्सर ले आ।"[27]

दीपक और पतंग का प्रेम साहित्य जगत मे कवियों की कलम से अमरता प्राप्त कर चुका है। गुप्त जी ने उर्मिला और लक्ष्मण के प्रसंग में भी उसी प्रेम को आधार बनाते हुए लिखा है कि–

"दीपक के जलने में आली,
फिर भी है जीवन की लाली।
किंतु पतंग–भाग्य–लिपि काली,
किसका बस चलता है ?
दोनों ओर प्रेम पलता है।"[28]

वियोग की विभिन्न दिशाओं का यथा– चिंता, अभिलाषा, स्मरण, उद्वेग, प्रलाप और व्याधि आदि का वर्णन 'साकेत' में मिलता है।

"अब जो प्रियतम को पाऊँ !
तो इच्छा है, उन चरणों की रज में आप रमाऊँ।।"[29]
× × ×
"मैं निज अलिंद में खड़ी थी सखि, एक रात,
रिमझिम बूँदें पड़ती थीं, घटा छाई थी। ....
चौंक देखा मैंने, चुप कोने में खड़े थे प्रिय,
माई ! मुख–लज्जा उसी छाती में छिपाई थी।।"[30]
× × ×
"मुझे फूल मत मारो,
मैं अबला बाला वियोगिनी, कुछ तो दया करो।"[31]

जैसे उदाहरणों के माध्यम से हम कह सकते हैं कि 'साकेत' में विरह की विविध दशाओं का संवेदनात्मक अंकन हुआ है। प्रथम उदाहरण में विरह की 'अभिलाषा' दशा, दूसरे उदाहरण में 'स्मरण' दशा और तीसरे में 'उद्वेग' की दशा को दर्शाया गया है।

'साकेत' में हम रामकथा और उर्मिला की कथा के साथ–साथ गाँधीदर्शन का प्रभाव भी देख सकते हैं। 'मानस' के राम और 'साकेत' के राम के चरित्र पर विचार करते हुए डॉ. नगेंद्र लिखते हैं कि– "मानस के राम भी 'धर्म–संस्थापनाय' एवं भू–भार हरने को अवतरित होते हैं– परंतु उनमें संरक्षक का भाव प्रधान है। साकेत के राम में सेवा–वृत्ति की प्रधानता होना गाँधी–नीति के ही प्रभाव का परिणाम है ! गाँधीवाद के कार्मिक (व्यवहारगत) स्वरूप से गुप्त जी पूर्ण रूप से सहमत हैं। साकेत में उसकी प्रतिध्वनि स्थान–स्थान पर मिलती है। गाँधीजी का रामराज्य ही लगभग साकेत का रामराज्य है। यद्यपि साकेत के राजा की स्थिति गाँधी के राजा की स्थिति से दृढ़ है। दोनों में राजा की विशेषताएँ हैं– 'नियत शासक लोकसेवक मात्र' अथवा 'राज्य में दायित्व का ही भार' तो मानो महात्मा जी के शब्दों की ही ध्वनि है ! इसी प्रकार 'प्रजा की थाती रहे अखंड' में गाँधीजी के 'ट्रस्टी' शब्द का ही व्याख्यान है ! उधर महात्मा जी के विनत–विद्रोह का प्रयोग कवि ने देशकाल के बंधन को भी तोड़ कर कराया है। सामाजिक क्षेत्र में गाँधीजी के दरिद्र–देव की सेवा और परिवार–न्याय दोनों का साकेत में आख्यान है ; और सीता तो उनकी चर्खा–योजना का प्रचार करती भी मालूम पड़ती है–

तुम अर्ध–नग्न क्यों रहो अशेष समय में
आओ हम कातें–बुनें गान की लय में।।"[32]

संपूर्ण 'साकेत' में इस प्रकार शृंगार के दोनों पक्षों के सुंदर वर्णन के साथ–साथ करुण, वीर और शांत रस का सुंदर वर्णन है। प्रकृति के आलंबन और उद्दीपन रूपों के वर्णन के साथ–साथ ऋतु–वर्णन द्रष्टव्य होता है। अनुकूल भाषा का प्रयोग पाठकों को आकर्षित करता है और आद्योपांत बाँधे रखता है। लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता और पद–मैत्री के साथ–साथ विविध लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग कलात्मक सौंदर्य में श्रीवृद्धि करता है। 'साकेत' राम कथा होने के साथ–साथ उर्मिला की व्यथा का गान है। 'साकेत' में अन्य और कई प्रसंग दिखाई पड़ते हैं। इन विषयों के अतिरिक्त रचनाकार ने 'साकेत' के माध्यम से अन्य विषयों यथा– सत्याग्रह

(राजा हमने राम तुम्ही को चुना, करो न तुम यों हाय लोकमत अनसुना), नारी सशक्तीकरण (औरों के हाथ नहीं पलती हैं, अपने पैरों आप चलती हैं), आदर्श समाज, राजतंत्र का विरोध, स्वदेश प्रेम आदि भावों को अभिव्यक्ति दी है। ग्रंथ की भूमिका में अपना उद्देश्य बताते हुए स्वयं राम के माध्यम से गुप्त जी यह कह देते हैं कि–

"संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया,
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।।"[33]

इस प्रकार साकेत आधुनिक हिंदी रामकाव्य परंपरा का एक प्रतिनिधि और प्रमुख ग्रंथ है। यह राम के चरित्र, आदर्श समाज और कई अन्यान्य विषयों पर प्रकाश डालने के साथ–साथ उर्मिला के त्याग, बलिदान, समर्पण और उसके चरित्र के विविध पक्षों को अभिव्यक्ति देता है।

संदर्भ :

1. मैथिलीशरण गुप्त : साकेत, निवेदन, साकेत प्रकाशन, चिरगाँव, झाँसी, 2015, पृ. 1
2. डॉ0 नगेंद्र : सं. हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा, पृ. 488
3. डॉ0 नगेंद्र : साकेत एक अध्ययन, साहित्य रत्न भंडार, आगरा, प्रथम संस्करण, 1940 पृ. 6
4. मैथिलीशरण गुप्त : साकेत, साकेत प्रकाशन, चिरगाँव, झाँसी, 2015, आंतरिक आवरण पृष्ठ
5. विश्वनाथ : साहित्यदर्पण, 6.325
6. मैथिलीशरण गुप्त : साकेत, साकेत प्रकाशन, 2015, पृ. 136
7. डॉ0 नगेंद्र : साकेत एक अध्ययन, साहित्य रत्न भंडार, आगरा, प्रथम संस्करण, 1940 पृ. 7
8. मैथिलीशरण गुप्त : साकेत, 2015, पृ. 4
9. वही, पृ. 21
10. वही, पृ. 70
11. वही, पृ. 78
12. वही, पृ. 155
13. वही, पृ. 156
14. वही, पृ. 176
15. www.hindisamay.com
16. मैथिलीशरण गुप्त : साकेत, 2015 पृ. 7
17. वही, पृ. 62
18. वही, पृ. 168
19. वही, पृ. 160
20. वही, पृ. 177
21. वही, पृ. 317
22. वही, पृ. 166
23. वही, पृ. 166
24. डॉ0 नगेंद्र : साकेत एक अध्ययन, प्रथम संस्करण, 1940, पृ. 69
25. वही, पृ. 70
26. मैथिलीशरण गुप्त : साकेत, 2015, पृ. 170
27. वही, पृ. 173
28. वही, पृ. 178
29. वही, पृ. 208
30. वही, पृ. 188
31. वही, पृ. 201
32. डॉ0 नगेंद्र : साकेत एक अध्ययन, प्रथम संस्करण 1940, पृ. 148–149
33. मैथिलीशरण गुप्त : साकेत, 2015, पृ. 146

सहायक आचार्य हिन्दी विभाग,
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय
उदयपुर–313001
मो0–9828351618